मैत्री एवं क्षमा के बीज बोएँ, खुशियाँ पाएँ

मैत्री दिवस (1 सितम्बर 2020) पर प्रकाशनार्थ

जैनधर्म की अहिंसा, मैत्री, क्षमा, त्यागप्रधान संस्कृति में पर्युषण एवं दसलक्षण पर्व के सर्वोत्कर्ष अवसर मैत्री दिवस का अपना अपूर्व एवं विशिष्ट आध्यात्मिक महत्व है। यह मानवीय एकता, आपसी सौहार्द, भाईचारा एवं आपसी मित्रता का प्रतीक दिवस है। आत्मशुद्धि एवं आत्म उन्नयन के दसलक्षण पर्व का हृदय है-'मैत्री दिवस'। यह दसलक्षण पर्व की दस दिवसीय साधना के बाद ग्यारहवें दिन आयोजित किया जाता है। दिगंबर जैन धर्मावलंबी दस दिन तक उत्तम क्षमा, उत्तम मार्जव, उत्तम आर्जव, उत्तम शौच, उत्तम सत्य, उत्तम संयम, उत्तम तप, उत्तम त्याग, उत्तम अकिंचन, उत्तम ब्रह्मचर्य की साधना, आराधना, पूजन आत्म शुद्धि की भावना के साथ करते हैं। आत्मकल्याण के पर्व पर श्रावक अपनी शक्ति के अनुसार व्रत व संयम धारण कर अहिंसा मार्ग पर चलते हैं। पर्यूषण जैन धर्म का मुख्य पर्व है। जैन धर्म के श्वेतांबर इस पर्व को 8 दिन और दिगंबर संप्रदाय में 10 दिन तक मनाया जाता है।

अनंत चतुर्दशी के दूसरे दिन मंदिर एवं घरों में सभी लोग, भक्त-जन एक साथ प्रतिक्रमण करते हुए पूरे साल मे किये गए पाप और कटु वचन से किसी के दिल को जाने-अनजाने ठेस पहुंची हो, तो उसके लिए एक-दूसरे को क्षमा करते हैं और एक-दूसरे से क्षमा माँगते है और हाथ जोड़कर गले मिलकर मिच्छामी

दूक्कडम कहते हैं। इस दिन अपनी भूलों या गलतियों के लिए क्षमा मांगना एवं दूसरों की भूलों को भूलना, माफ करना, यही इस दिवस को मनाने की सार्थकता सिद्ध करता है। यदि कोई व्यक्ति इस दिन भी दिल में उलझी गांठ को नहीं खोलता है, तो वह अपने सम्यग्दर्शन की विशुद्धि में प्रश्नचिन्ह खड़ा कर लेता है। मैत्री की अभिव्यक्ति करना, मात्र वाचिक जाल बिछाना नहीं है। परंतु सम्पूर्ण मानवता के साथ मित्रता करना अपने अंतर को प्रसन्नता से भरना है। बिछुड़े हुए दिलों को मिलाना है, सद्भावना एवं करुणा की स्रोतस्विनी बहाना है। वर्ष भर के बाद इस प्रकार यह मैत्री पर्व मनाना, जैनधर्म की दुर्लभ विशेषताओं में से एक है। इसे ग्रंथि विमोचन का पर्व भी कहते है क्योंकि यह पर्व ग्रंथियों को खोलने की सीख देता है। कोरोना महाव्याधि के संक्रमण दौर में क्षमा एवं मैत्री दिवस की अधिक प्रासंगिकता एवं उपयोगिता इसलिये है कि यह आत्मज्योति को प्रज्ज्वलित करने के साथ-साथ रोग प्रतिरोधक क्षमता जगाने का सशक्त माध्यम है।

आचार्य ज्ञानसागरजी कहा करते थे कि मैत्री पर्व का दर्शन बहुत गहरा है। मैत्री तक पहुंचने के लिए क्षमायाचना की तैयारी जरूरी है। क्षमा लेना और क्षमा देना मन परिष्कार की स्वस्थ परम्परा है। क्षमा मांगने वाला अपनी कृत भूलों को स्वीकृति देता है और भविष्य में पुनः न दुहराने का संकल्प लेता है जबकि क्षमा देने वाला आग्रह मुक्त होकर अपने ऊपर हुए आघात या हमलों को बिना किसी पूर्वाग्रह या निमित्तों को सह लेता है। क्षमा एवं मैत्री ऐसा विलक्षण आधार है जो किसी को मिटाता नहीं, सुधरने का मौका देता है। मैत्री घने अंधेरो के बीच जुगनू की तरह चमकता प्रेरक एवं मूल्यवान जीवनमूल्य हैं।

मानवीय व्यक्तित्व का एक महत्वपूर्ण घटना तत्व है मैत्री। मैत्री दर्शन व्यक्तित्व को गरिमा प्रदान करती है, उसे गहराई और ऊंचाई देती है। क्षमा एवं मैत्री के अभाव में मनुज दानव बन जाता है। मैत्री धर्म की प्रतिष्ठा है। आपसी मतभेद होते हुए भी सब धर्मों और संप्रदायों ने क्षमा एवं मैत्री की महत्ता एक मत से स्वीकार की है। आचार्य विद्यासागरजी के अनुसार भी 'क्षमा' वीरों का आभूषण है। हर धर्म में क्षमा का महत्व है। वैदिक ग्रंथों में भी क्षमा की श्रेष्ठता पर बल दिया गया है। यहूदी, इस्लाम और ईसाई धर्मों में क्षमा एवं मैत्री को ऊंचा स्थान प्राप्त है। ईसाइयत के बुनियादी तत्वों में इसकी गणना होती है। ईसाई धर्म के प्रवर्तक ईसा मसीह की क्षमा भावना सुविख्यात है। जिन लोगों ने उन्हें शूली पर चढ़ाया, उनके लिए भी उन्होंने कहा-"परमात्मा! उनको माफ कर दो, क्योंकि वे नहीं जानते वे क्या कर रहे हैं।" इस्लाम में भी माफी की ताकत एवं मैत्री के दर्शन को खुदाई ताकत के रूप में स्वीकार किया गया है। पारसी धर्म के प्रवर्तक जरथुस्त्र तो उस धर्म को धर्म मानने के लिए भी तैयार नहीं थे, जिसमें क्षमा एवं मैत्री को स्थान न हो।

भगवान महावीर ने कहा-'अहो ते खंति उत्तमा'-क्षांति उत्तम धर्म है। 'तितिक्खं परमं नच्चा'-तितिक्षा ही जीवन का परम तत्व है, यह जानकर क्षमाशील बनो। तथागत बुद्ध ने कहा-क्षमा ही परमशक्ति है। क्षमा ही परम तप है। क्षमा धर्म का मूल है। क्षमा के समकक्ष दूसरा कोई भी तत्व हितकर नहीं है। क्योंकि प्रेम, करुणा और मैत्री के फूल सहिष्णुता और क्षमा की धरती पर ही खिलते हैं। मैत्री शब्द बहुत मीठा है। मित्र सबको अच्छा लगता है, शत्रु अच्छा नहीं लगता। मनुष्य इस प्रयास के साथ जीता है कि मेरे अधिक से अधिक मित्र बनें। राग और द्वेष-इन दोनों से परे है मैत्री।
'सबके साथ मैत्री करो' यह कथन बहुत महत्त्वपूर्ण है किंतु जब तक मैत्री की प्रक्रिया और मैत्री का दर्शन स्पष्ट नहीं होता, तब तक 'मैत्री करो' की बहुत सार्थकता और सफलता नहीं होती। यह मैत्री का विराट्

दर्शन है। हम वर्तमान संबंधों को बहुत सीमित बना लेते हैं। दर्द सबका एक जैसा होता है, पर हम चेहरों को देखकर अपना-अपना अन्दाज लगाते हैं। यह स्वार्थपरक व्याख्या हमें प्रेम से जोड़ सकती है मगर करुणा से नहीं। प्रेम में स्वार्थ है, राग-द्वेष के संस्कार है, जबकि करुणा परमार्थ का पर्याय बनती है। कहा जाता है-'वसुधैव कुटुम्बकम्' वसुधा कुटुम्ब है, परिवार है। यह प्रत्यक्ष दर्शन की बात है। किंतु अतीत में जाएँ तो इसका अर्थ होगा-इस जगत् में जो प्राणी है, वह कभी न कभी तुम्हारे कुटुम्ब या परिवार का सदस्य रहा है। महावीर ने कहा-'हाँ, यह जीव सब जीवों के माता-पिता, भाई-बहन आदि संबंधों के रूप में एक बार नहीं, अनेक बार पैदा हुआ है।'

'मित्ती में सव्व भूएसु वेरं मज्झ न केणई'- यह सार्वभौम अहिंसा एवं सौहार्द का ऐसा संकल्प है जहां वैर की परम्परा का अंत होता है। क्रूरता करुणा में बदलती है, हिंसा से जन्मे भय और असुरक्षा के भाव समाप्त होते हैं। मनुष्य-मनुष्य के बीच सहअस्तित्व जागता है। क्षमा एवं मैत्री हमारी संस्कृति है। संपूर्ण मानवीय संबंधों की व्याख्या है। मैत्री को हम एक शब्द भर न समझे, यह एक संपूर्ण जीवन शैली है। आज के स्वार्थी युग में मैत्री की बात को केवल तर्क की तुला पर तौलेंगे तो संभवतः सही परिणाम नहीं आ पायेंगे। क्योंकि मैत्री स्वार्थ से नहीं, हृदय से आती है। इसीलिए मैत्री की जमीं जहां भी कमजोर पड़ती है, बुनियाद के खोखले हो जाने का भय भी जीवन के इर्द-गिर्द नए खतरे खड़े कर देता है। आज मानवीय संबंधों में दरारें पड़ रही हैं, संवेदनाओं का उत्स सूख रहा है, निजी स्वार्थों की पूर्ति में हम औरों के अस्तित्व को नकार रहे हैं, मन के प्रतिकूल कभी किसी को एक क्षण के लिए भी नहीं सहते। सत्ता, शक्ति, अधिकार और न्याय का उचित उपयोग नहीं करते।

प्रश्न उभरता है, आज मनुष्य-मनुष्य के बीच मैत्री-भाव का इतना अभाव क्यों? क्यों है इतना पारस्परिक दुराव? क्यों है वैचारिक वैमनस्य? क्यों मतभेद के साथ जनमता मनभेद? ज्ञानी, विवेकी, समझदार होने के बाद भी आए दिन मनुष्य लड़ता झगड़ता है। विवादों के बीच उलझा हुआ तनावग्रस्त खड़ा रहता है। न वह विवेक की आंख से देखता है, न तटस्थता और संतुलन के साथ सुनता है, न सापेक्षता से सोचता और निर्णय लेता है। यही वजह है कि वैयक्तिक रचनात्मकता समाप्त हो रही है। पारिवारिक सहयोगिता और सहभागिता की भावनाएं टूट रही हैं। सामाजिक बिखराव सामने आ रहा है। धार्मिक आस्थाएं कमजोर पड़ने लगी हैं। आदमी स्वकृत धारणाओं को पकड़े हुए शब्दों की कैद में स्वार्थों की जंजीरों की कड़ियां गिनता रह गया है। ऐसे समय में मैत्री दिवस व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र एवं मानवीय रिश्तों में नयी ऊर्जा का संचार करता है। मैत्री एवं क्षमा का भाव हमारे आत्म-विकास का सुरक्षा कवच है। आचार्य श्री तुलसी ने इसके लिए सात सूत्रों का निर्देश किया। मैत्री के लिए चाहिए-विश्वास, स्वार्थ-त्याग, अनासक्ति, सहिष्णुता, क्षमा, अभय, समन्वय। यह सप्तपदी साधना जीवन की सार्थकता एवं सफलता की पृष्ठभूमि है। विकास का दिशा-सूचक यंत्र है।

कोरोना महाव्याधि एवं कहर के दौरान हर इंसान सुख, स्वास्थ्य, जीवन-सुरक्षा और शांति की खोज में हैं और पता लगाना चाहता है कि सुखी, स्वास्थ्य, सुरक्षा और शांति है कहां? इसका सरल जबाव है कि क्षमा एवं मैत्री दर्शन में ही यह निहित है। वार्तमानिक परिवेश में जबकि मानवीय संवदेनाओं एवं आपसी रिश्तों की जमीं सूखती जा रही है ऐसे समय में एक दूसरे से जुड़े रहकर जीवन को खुशहाल बनाने और दिल में जादुई संवेदनाओं को जगाने का सशक्त माध्यम है मैत्री दिवस। एक मात्र जैन धर्म ही ऐसा है, जिसने मैत्री को पर्व का रूप देकर जीवन-व्यवहार के साथ जोड़ा है। जरूरत है हम सभी मैत्री पर्व

व्यापक रूप में मनाये ताकि हमारे व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय जीवन में सौहार्द स्थापित हो सके। यही क्षण जीवन को सार्थकता दे पायेगा।

प्रेषक:
(ललित गर्ग)
लेखक, पत्रकार, स्तंभकार
ई-253, सरस्वती कंुज अपार्टमेंट
25 आई. पी. एक्सटेंशन, पटपड़गंज, दिल्ली-92